LEARN GEETA
तस्मात् योगी भवार्जुन

|| श्रीहरिः ||
वसुदेवसुतं देवं कंसचाणूरमर्दनम् |
देवकीपरमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम् ||

गीता परिवार
|| गीता पढ़ें, पढ़ायें, जीवन में लायें ||

|| श्रीमद्भगवद्गीता विवेचन सारांश ||

अध्याय 9: राजविद्याराजगुह्ययोग

1/3 (श्लोक 1-10), शनिवार, 29 नवंबर 2025

विवेचक: गीता व्रती जाह्नवी जी देखणे

यूट्यूब लिंक: https://youtu.be/Oijwc4Y8dW0

ईश्वर और भक्त की आत्मीयता

गीता परिवार की परम्परानुसार प्रभु स्मरण,दीप प्रज्वलन एवं गुरु वन्दना के साथ आज के विवेचन सत्र का शुभारम्भ किया गया।

अध्याय नौ गीता जी का अत्यन्त महत्वपूर्ण अध्याय है। सभी साधकों से सीधी कमर रखकर, हाथ जोड़कर प्रभु-प्रार्थना के लिए कहा गया। भावपूर्ण प्रार्थना व वन्दना के पश्चात विवेचन की शुरुआत गीता जयन्ती के विषय में विस्तृत जानकारी के साथ की गई।

सभी ग्रन्थों में गीता जी विशिष्ट हैं—
यह ज्ञान का भण्डार है।
इसमें जीवन के सभी प्रश्नों का समाधान निहित है।

जिस प्रकार हमारे घर में हम सभी के प्रश्नों के उत्तर हमारे माता-पिता शान्तिपूर्वक देते हैं, वैसे ही गीता माता भी हमारे जीवन में आने वाली समस्याओं का समाधान हमें बतलाती हैं। हमारे मन में उत्पन्न होने वाली समस्त उलझनों का निवारण करती हैं, अतः **जिस प्रकार हम अपने परिवार के विशिष्ट जनों के जन्मदिवस मनाते हैं, उसी प्रकार हमें गीता माता का जन्मदिन भी मनाना चाहिए।**

पहले अध्याय को जब हम पढ़ते हैं तो पता चलता है कि उसमें श्रीभगवान् कुछ बोलते ही नहीं— वे केवल सुनते हैं।

सञ्जय, धृतराष्ट्र और अर्जुन— इन तीनों का संवाद होता है, किन्तु इस अध्याय में बोलने वाले अर्जुन हैं और सुनने वाले स्वयं श्रीभगवान्। श्रीभगवान् भले ही वाणी से न बोल रहे हों, किन्तु शरीर और मुखमण्डल से उनकी प्रतिक्रियाएँ अवश्य प्रकट हो रही होंगी। इसी कारण इस अध्याय की पुष्पिका में इसे **"कृष्णार्जुनसंवाद"** कहा गया है।

संवादात्मक सत्र होने के नाते बाल साधकों से अध्याय का नाम पूछा गया। साधकों को बताया गया कि इस अध्याय का नाम **"राजविद्याराजगुह्ययोग"** है।

इस अध्याय के नाम में दो बार “राज” शब्द आया है। **“राज” का एक अर्थ राजा है और दूसरा अर्थ रहस्य भी है।**

रहस्य (सीक्रेट) वह होता है जिसे प्रत्येक व्यक्ति को नहीं बताया जाता, केवल अति प्रिय को ही बताया जाता है। ठीक उसी प्रकार श्रीभगवान् यह परम रहस्य अर्जुन को बता रहे हैं क्योंकि अर्जुन उनके अति प्रिय हैं।

रणक्षेत्र में श्रीभगवान् द्वारा गाया गया यह गीत वहाँ उपस्थित अन्य किसी को नहीं सुनाया गया। यह रहस्यपूर्ण एवं गूढ़ बातें श्रीभगवान् ने केवल अर्जुन को ही कही हैं।

9.1

श्रीभगवानुवाच
इदं(न्) तु ते गुह्यतमं(म्), प्रवक्ष्याम्यनसूयवे।
ज्ञानं(व्ँ) विज्ञानसहितं(यँ), यज्ज्ञात्वा मोक्ष्यसेऽशुभात्॥9.1॥

श्रीभगवान् बोले -- यह अत्यन्त गोपनीय विज्ञान सहित ज्ञान दोष दृष्टि रहित तेरे लिये तो (मैं फिर) अच्छी तरह से कहूँगा, जिसको जानकर (तू) अशुभ से अर्थात् जन्म-मरण रूप संसार से मुक्त हो जायगा।

विवेचन- यहाँ श्रीभगवान् कहते हैं— **"हे अनसूयवे"(अर्जुन)**।

प्रश्न- भगवान् श्रीकृष्ण गीता जी में अर्जुन को किस-किस नाम से सम्बोधित करते हैं?
उत्तर- अर्जुन को **पार्थ, कौन्तेय, पृथा-पुत्र, महाबाहो, धनञ्जय तथा अनसूयवे** नामों से सम्बोधित किया गया है।

अनसूयवे का अर्थ है— जो घृणा और ईर्ष्या से रहित हो, जिसका चित्त और मन शुद्ध हो।

अर्जुन में दूसरों के दोष देखने की वृत्ति है ही नहीं; उन्हें सभी में अच्छाई ही दिखाई देती है। इसी कारण अर्जुन श्रीभगवान् को अत्यन्त प्रिय हैं।

महाभारत में आने वाले अनेक प्रसङ्ग, जिसमें कौरवों ने पाण्डवों को मारने के लिए विष देने का प्रयास किया, लाक्षागृह की रचना की तथा अन्य अनेक प्रकार से पाण्डवों को कष्ट पहुँचाया, तब भी अर्जुन कौरवों से ईर्ष्या या द्वेष नहीं करते हैं। इसके विपरीत युद्धभूमि में भी अर्जुन अपने विरुद्ध युद्ध करने आये योद्धाओं में शत्रुओं के दर्शन न करते हुए, अपने ही परिवारजनों के दर्शन कर रहे हैं।

अर्जुन श्रीभगवान् से कहते हैं— "मैं अपने परिजनों से कैसे युद्ध करूँ?"

अर्जुन के व्यक्तित्व में ऐसी शुद्धता देखते हुए ही श्रीभगवान् अर्जुन से कहते हैं— "हे अर्जुन! अब मैं तुम्हें ऐसी बातें बताऊँगा जिन्हें जानकर तुम्हें ज्ञान भी प्राप्त होगा और विज्ञान भी।"

- **ज्ञान और विज्ञान के अन्तर को स्पष्ट किया गया।**

उदाहरण- जैसे एक रसगुल्ला है, उसे देखकर हम यह कह सकते हैं कि यह रसगुल्ला है — **यही ज्ञान है,** परन्तु रसगुल्ला कैसा है — कितना मीठा, कितना कोमल, कितना रसदार है, यह केवल देखकर नहीं जाना जा सकता। इसके लिए उसे चखना ही होगा। **यह प्रत्यक्ष अनुभूति— विज्ञान है**।

अर्थात—
जानना ज्ञान है और जानकर समझना व अनुभव करना विज्ञान है।

9.2

राजविद्या राजगुह्यं(म्), पवित्रमिदमुत्तमम्।
प्रत्यक्षावगमं(न्) धर्म्यं(म्), सुसुखं(ङ्) कर्तुमव्ययम्।।9.2।।

यह (विज्ञान सहित ज्ञान अर्थात् समग्र रूप) सम्पूर्ण विद्याओं का राजा (और) सम्पूर्ण गोपनीयों का राजा है। यह अति पवित्र (तथा) अतिश्रेष्ठ है (और) इसका फल भी प्रत्यक्ष है। यह धर्ममय है, अविनाशी है (और) करने में बहुत सुगम है अर्थात् इसको प्राप्त करना बहुत सुगम है।

विवेचन- इस श्लोक में "राज" शब्द का दो बार प्रयोग हुआ है।

प्रश्न- विद्या कितने प्रकार की होती है?

उत्तर- उदाहरण द्वारा समझाया गया कि—

- यदि विद्या का उपयोग अच्छे कार्यों के लिए किया जाए तो वह अच्छी विद्या कहलाती है,
- परन्तु यदि विद्या का उपयोग अनुचित कार्यों के लिए किया जाए तो वह विद्या का दुरुपयोग कहलाती है।

जैसे— मिसाइल बनाने के लिए जिस विद्या का उपयोग किया गया, यदि उसी विद्या का उपयोग कोई **आतङ्कवादी** बम बनाने के लिए करता है, तो विद्या तो वही है, पर उसका उपयोग अमानवीय तथा अनुचित है, अतः दोष विद्या में नहीं, विद्या के उपयोगकर्ता में होता है।

अर्थात् —
विद्या अच्छी या बुरी नहीं होती, उसे उपयोग करने वाला उसे अच्छा या बुरा बनाता है।

श्रीभगवान् कहते हैं —
मैं जो ज्ञान बता रहा हूँ, वह अत्यन्त पवित्र है तथा अत्यन्त सुख देने वाला है।

परन्तु इसे प्राप्त करने के लिए श्रद्धा अत्यन्त आवश्यक है।

9.3

अश्रद्दधानाः(फ्) पुरुषा, धर्मस्यास्य परन्तप।
अप्राप्य मां(न्) निवर्तन्ते, मृत्युसंसारवर्त्मनि।।9.3।।

हे परंतप! इस धर्म की महिमा पर श्रद्धा न रखने वाले मनुष्य मुझे प्राप्त न होकर मृत्युरूप संसार के मार्ग में लौटते रहते हैं अर्थात् बार-बार जन्मते-मरते रहते हैं।

विवेचन- श्रीभगवान् कहते हैं कि इस ज्ञान को प्राप्त करने के लिए धर्म में **श्रद्धा** चाहिए।

- **श्रद्धा रहित पुरुष इस ज्ञान को नहीं पा सकता।**

उदाहरण- जिस तरह एक बिन्दु है, जिसकी न लम्बाई है, न चौड़ाई है, न भार है। तब भी उसका अस्तित्व तो है ही, क्योंकि बिन्दु से सरल रेखा, त्रिभुज आदि बनाया जा सकता है। यह तभी सम्भव है **जब हम बिन्दु के अस्तित्व को स्वीकारते हैं।**

उसी प्रकार श्रीभगवान् कहते हैं कि मुझमें यदि श्रद्धा तथा विश्वास नहीं है तो मेरी बतलाई बातें बिल्कुल भी समझ में नहीं आएँगी। अतः इस ज्ञान को प्राप्त करने के लिए धर्म में, अर्थात् श्रीभगवान् में श्रद्धा एवं विश्वास अनिवार्य है।

9.4

मया ततमिदं(म्) सर्वं(ञ्), जगदव्यक्तमूर्तिना।
मत्स्थानि सर्वभूतानि, न चाहं(न्) तेष्ववस्थितः।।9.4।।

यह सब संसार मेरे निराकार स्वरूप से व्याप्त है। सम्पूर्ण प्राणी मुझ में स्थित हैं; परन्तु मैं उनमें स्थित नहीं हूँ तथा (वे) प्राणी (भी) मुझ में स्थित नहीं हैं - मेरे इस ईश्वर-सम्बन्धी योग (सामर्थ्य) को देख ! सम्पूर्ण प्राणियों को उत्पन्न करने वाला और प्राणियों का धारण, भरण-पोषण करने वाला मेरा स्वरूप उन प्राणियों में स्थित नहीं है। (9.4-9.5)

विवेचन- यहाँ श्रीभगवान् कहते हैं कि सारा संसार मुझमें ही व्याप्त है। यह इस प्रकार है कि- **श्रीभगवान् कण-कण में व्याप्त हैं।**

समस्त भूत (अर्थात सभी प्राणी) मुझमें स्थित हैं, परन्तु मैं उनमें स्थित नहीं हूँ क्योंकि मैं अव्यक्त रूप में सर्वत्र स्थित हूँ। पहली बार सुनने पर यह व्याख्या उलझनपूर्ण प्रतीत होती है, इसलिए इस उलझन को श्रीभगवान् अगले श्लोक में स्पष्ट करते हैं। एक उदाहरण से श्रीभगवान् के इस कथन को समझा जा सकता है—

- **श्रीभगवान् का अस्तित्व केवल पृथ्वी तक सीमित नहीं है।**

समुद्र का उदाहरण लेते हैं —
यदि समुद्र की लहर का जल निकालकर एक पात्र में रख दिया जाए तो वह जल लहर नहीं कहलाएगा और उस पात्र में रखी लहर के जल को समुद्र भी नहीं कहा जा सकता, परन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि समुद्र का अस्तित्व समाप्त हो गया है।

समुद्र अपने रूप में, अपने अस्तित्व में सदैव बना ही रहता है।

इसी प्रकार —
सभी प्राणियों का निवास श्रीभगवान् में है, परन्तु श्रीभगवान् का अस्तित्व, उनकी सत्ता, स्वतन्त्र और अनादि-अनन्त है।

9.5

न च मत्स्थानि भूतानि, पश्य मे योगमैश्वरम्।
भूतभृन्न च भूतस्थो, ममात्मा भूतभावनः।।9.5।।

विवेचन- श्रीभगवान् इस श्लोक में भी पहले कही गई बातों को ही आगे विस्तार से समझा रहे हैं। यहाँ एक दृष्टान्त द्वारा समझ सकते हैं—

जब नन्हें कन्हैया ने अटखेलियाँ करते हुए मिट्टी उठाकर अपने मुँह में ले ली, यह देख यशोदा मैया विचलित हो उठीं एवं कान्हा के मुख से मिट्टी निकालने के उद्देश्य से जिस क्षण उन्होंने बालक का मुँह खुलवाने का प्रयास किया, नन्हें बालक के मुख के भीतर उन्होंने जो देखा वह देखकर वे अचम्भित हो उठीं। उन्होंने कान्हा के मुख के भीतर सम्पूर्ण सृष्टि के दर्शन, चौदह भुवनों के दर्शन किये।

अपने पुत्र के मुख में सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को देख माँ यशोदा अचेत हो भूमि पर गिर जाती हैं। माँ की यह अवस्था देख, श्रीभगवान् शीघ्रता से अपने मुख को बन्द कर तथा अपनी मोहिनी द्वारा यशोदा जी के मस्तिष्क से इस घटना की स्मृति को लुप्त कर देते हैं। यह श्रीभगवान् की योगमाया से सम्भव हो सका।

ठीक इसी प्रकार श्रीभगवान् कहते हैं कि —

- **मैं आत्मस्वरूप हूँ, इसलिए मैं भूतों में स्थित नहीं हूँ।**

यद्यपि समस्त प्राणी श्रीभगवान् में स्थित हैं परन्तु श्रीभगवान् अपनी मूल सत्ता और स्वरूप के कारण किसी एक शरीर, रूप या सीमा में बँधे नहीं हैं।

इसी बात को श्रीभगवान् अगले श्लोक में और भी स्पष्ट करते हैं।

9.6

यथाकाशस्थितो नित्यं(वँ), वायुः(स्) सर्वत्रगो महान्।
तथा सर्वाणि भूतानि, मत्स्थानीत्युपधारय॥9.6॥

जैसे सब जगह विचरने वाली महान् वायु नित्य ही आकाश में स्थित रहती है, ऐसे ही सम्पूर्ण प्राणी मुझमें ही स्थित रहते हैं - ऐसा तुम मान लो।

विवेचन- यहाँ श्रीभगवान् कहते हैं कि वायु सदा आकाश में स्थित रहती है, परन्तु अन्तरिक्ष (स्पेस) में किसी प्रकार की वायु नहीं होती, तथापि आकाश सर्वत्र व्याप्त है।

इसी प्रकार वे बतलाते हैं— मैं सब भूतों में स्थित हूँ, परन्तु सबका स्वभाव मैं नहीं हूँ, अर्थात् मैं सर्वत्र हूँ और उनसे परे भी हूँ।

उदाहरण के लिये— पूर्णिमा की रात को, तालाब में चन्द्रमा का स्पष्ट प्रतिबिम्ब दिखाई देता है। यदि तालाब के पानी में कङ्कर डाल दिया जाए तो पानी के हिलने से प्रतिबिम्ब भी हिलता हुआ दिखेगा, परन्तु इससे यह नहीं कह सकते कि आकाश में स्थित चन्द्रमा हिल रहा है— वह तो स्थिर ही है।

इसी प्रकार **सृष्टि का निर्माण और विनाश चलता रहता है, परन्तु उससे मेरे (श्रीभगवान् के) स्वरूप पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।**

श्रीभगवान् कहते हैं कि तुम मुझे इस प्रकार जानो— ऐसा जानने से तुम मेरे भक्त बन जाओगे।

9.7

सर्वभूतानि कौन्तेय, प्रकृतिं(यँ) यान्ति मामिकाम्।
कल्पक्षये पुनस्तानि, कल्पादौ विसृजाम्यहम्॥9.7॥

हे कुन्तीनन्दन ! कल्पों का क्षय होने पर (महाप्रलय के समय) सम्पूर्ण प्राणी मेरी प्रकृति को प्राप्त होते हैं (और) कल्पों के आदि में (महासर्ग के समय) मैं फिर उनकी रचना करता हूँ।

विवेचन- श्रीभगवान् कहते हैं— हे अर्जुन! तुम यह अच्छी तरह समझ लो कि प्रत्येक कल्प के आरम्भ में सृष्टि की रचना और अन्त में सृष्टि का संहार, मैं ही करता हूँ।

प्रश्न- चारों युगों के नाम क्या है?
उत्तर- सतयुग, त्रेतायुग, द्वापरयुग और कलियुग।

- वर्तमान में कलियुग चल रहा है।

जब ये चारों युग हजारों-हजारों बार पूरे हो जाते हैं, तब एक कल्प पूरा होता है। श्रीभगवान् कहते हैं—

सृष्टि की रचना भी मेरी माया से होती है और सृष्टि का संहार भी मेरी माया से ही होता है।

9.8

प्रकृतिं(म्) स्वामवष्टभ्य, विसृजामि पुनः(फ्) पुनः।
भूतग्राममिमं(ङ्) कृत्स्नम्, अवशं(म्) प्रकृतेर्वशात्।।9.8।।

प्रकृति के वश में होने से परतन्त्र हुए इस सम्पूर्ण प्राणी समुदाय की (कल्पों के आदि में) मैं अपनी प्रकृति को वश में करके बार-बार रचना करता हूँ।

विवेचन- श्रीभगवान् कहते हैं—
सृष्टि की रचना और विनाश मैं ही करता हूँ, परन्तु इन कर्मों, में मैं किसी भी प्रकार से बँधता नहीं हूँ।

अर्थ यह है कि—
श्रीभगवान् सृष्टि के सञ्चालन, पालन और संहार के कर्ता तो हैं, परन्तु वे कर्ता-भाव से रहित हैं।

एक और दृष्टान्त—
जैसे कोई उच्च पद का अधिकारी राज्य के अनेक कार्य करवाता है, निर्णय लेता है, कर्त्तव्य निभाता है, परन्तु उसका व्यक्तिगत सम्बन्ध उन कार्यों या परिणामों से नहीं जुड़ता— **वे कार्य कर्त्तव्य के लिए होते हैं, स्वार्थ के लिए नहीं।**

इसी प्रकार **भगवान् के द्वारा किया गया कोई भी कार्य स्वार्थ, लोभ, आसक्ति या फल की इच्छा से नहीं होता।**

महत्त्वपूर्ण बातें-

- सृष्टि की रचना होती है- श्रीभगवान् प्रेरक हैं।
- सृष्टि का विनाश होता है- श्रीभगवान् कारण हैं।

परन्तु इन दोनों से श्रीभगवान् पर कर्मफल का कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

क्योंकि **वे सर्वकर्ता हैं, परन्तु अकर्ता-भाव वाले हैं।**

श्रीभगवान् अर्जुन को समझाते हैं—
जिस प्रकार मैं बड़ी से बड़ी गतिविधियों में संलग्न रहकर भी उनसे अलिप्त रहता हूँ, वैसे ही तुम भी संसार में अपने कर्त्तव्य करते हुए अलिप्त भाव में रह सकते हो।

यही भाव भक्त को श्रीभगवान् की ओर ले जाता है।

9.9

न च मां(न्) तानि कर्माणि, निबध्नन्ति धनञ्जय।
उदासीनवदासीनम्, असक्तं(न्) तेषु कर्मसु।।9.9।।

हे धनञ्जय ! उन (सृष्टि-रचना आदि) कर्मों में अनासक्त और उदासीन की तरह रहते हुए मुझे वे कर्म नहीं बाँधते।

विवेचन- यहाँ श्रीभगवान् अर्जुन को धनञ्जय नाम से सम्बोधित करते हुए कहते हैं—
हे धनञ्जय! सृष्टि की रचना आदि कार्य मैं ही करता हूँ, तब भी उनसे चिपकता नहीं हूँ, क्योंकि उनमें मेरी कोई आसक्ति नहीं है, इसलिए ये कर्म मुझे बन्धन में नहीं बाँधते।

- **मैं उनमें उदासीन भाव से स्थित रहता हूँ।**

उदाहरण से समझाया गया है—
जैसे पङ्खे की पङ्खुड़ियाँ घूमती रहती हैं, पर उसका मध्य भाग स्थिर रहता है। इसी प्रकार श्रीभगवान् कहते हैं कि संसार में असङ्ख्य कर्म गतिमान हैं, पर मैं अन्दर से पूर्ण उदासीन और स्थिर रहता हूँ।

श्रीभगवान् आगे कहते हैं —

जो मनुष्य भी इसी प्रकार उदासीन भाव से अपने कर्म मुझे समर्पित करके करता है, वह कर्म–बन्धन में नहीं फँसता और जन्म–मरण के चक्र से मुक्त हो जाता है।

9.10

मयाध्यक्षेण प्रकृतिः(स्), सूयते सचराचरम्।
हेतुनानेन कौन्तेय, जगद्विपरिवर्तते।।9.10।।

प्रकृति मेरी अध्यक्षता में सम्पूर्ण चराचर जगत को रचती है। हे कुन्तीनन्दन ! इसी हेतु से जगत का (विविध प्रकार से) परिवर्तन होता है।

विवेचन- यहाँ श्रीभगवान् कहते हैं कि मेरी अध्यक्षता में और मेरी उपस्थिति में ही सम्पूर्ण जगत का परिवर्तन होता रहता है। ये बातें पहली बार सुनने में थोड़ी कठिन प्रतीत हो सकती हैं, लेकिन श्रद्धा के साथ समझने पर सहज रूप से स्पष्ट हो जाती हैं।

श्रीभगवान् कहते हैं— **"श्रद्धावान् लभते ज्ञानम्"।**
अर्थात्— जो मनुष्य श्रद्धा के साथ श्रीभगवान् में मन लगाता है, वह अवश्य ही श्रीभगवान् का ज्ञान प्राप्त करता है।

इसी प्रकार, श्रद्धा और विश्वास के साथ श्रीभगवान् का ध्यान करने से साधक धीरे-धीरे उनके स्वरूप को समझने लगता है एवं उन्हें प्राप्त भी करता है।

अन्त में इसी श्लोक के साथ आज के विवेचन सत्र का समापन किया गया, हरि कीर्तन किया गया।

हमें विश्वास है कि आपको विवेचन की रचना पढ़कर अच्छा लगा होगा। कृपया नीचे दिए लिंक का उपयोग करके हमें अपनी प्रतिक्रिया दीजिए।

https://vivechan.learngeeta.com/feedback/

विवेचन-सार आपने पढ़ा, धन्यवाद!
हम सब गीता सेवी, अनन्य भाव से प्रयास करते हैं कि विवेचन के अंश आप तक शुद्ध वर्तनी में पहुंचे। इसके बाद भी वर्तनी या भाषा संबंधी किन्हीं त्रुटियों के लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं।

जय श्री कृष्ण !

संकलन: गीता परिवार - रचनात्मक लेखन विभाग

हर घर गीता, हर कर गीता!

Let's come together with the motto of Geeta Pariwar, and gift our Geeta Classes to all our Family, friends & acquaintances

https://gift.learngeeta.com/

गीता परिवार ने एक नवीन पहल की है। अब आप पूर्व में सञ्चालित हुए सभी विवेचनों कि यूट्यूब विडियो एवं पीडीऍफ़ को देख एवं पढ़ सकते हैं। कृपया नीचे दी गयी लिंक का उपयोग करे।

https://vivechan.learngeeta.com/

|| गीता पढ़े, पढ़ायें, जीवन में लाये ||

||ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ||